[2020] 3 उम. नि. प. 30

पॉल

बनाम

केरल राज्य

[2020 की दांडिक अपील सं. 38]

21 जनवरी, 2020

न्यायमूर्ति संजय किशन कौल और न्यायमूर्ति के. एम. जोसेफ

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 और 304 का भाग-1 [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106] – अभियुक्त द्वारा शराब के नशे में अपनी पत्नी की गला घोंटकर हत्या किया जाना – हत्या अपने शयन कक्ष में किया जाना – अभियुक्त का अभिवाक् मृतका द्वारा आत्महत्या किए जाने का होना – मामले के तथ्यों और परिस्थितियों, साक्षियों के साक्ष्य तथा मृतका को पहुंची क्षतियों से स्पष्ट रूप से यह सिद्ध होने पर कि अभियुक्त ने ही मृतका की गला घोंटकर मृत्यु कारित की थी, उसकी हत्या के अपराध के लिए दोषसिद्धि उचित है और हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध का मामला न होने के कारण दंडादेश को कम करना न्यायोचित नहीं होगा ।

इस अपील के तथ्यों के अनुसार, अपीलार्थी और उसकी माता को अपीलार्थी की पत्नी के साथ अभिकथित रूप से क्रूरता करने और मृत्यु कारित करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 498क और 302 के अधीन आरोप-पत्रित किया गया था । अभियुक्तों को तारीख 28 फरवरी, 2005 के आदेश द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया था । उसके पश्चात् अपीलार्थी की माता का देहांत हो गया । तथापि, केरल उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने तारीख 29 मार्च, 2012 के निर्णय द्वारा राज्य द्वारा दोषमुक्ति के विरुद्ध फाइल की गई दांडिक अपील मंजूर की और अपीलार्थी से संबंधित दोषमुक्ति को अपास्त कर दिया तथा मामले को इस निदेश के साथ प्रतिप्रेषित कर दिया कि मामले का निपटारा भारतीय दंड संहिता की धारा 313 के अधीन परीक्षा

के प्रक्रम से कार्यवाहियों को शुरू करके किया जाए । इसी प्रतिप्रेषण के पश्चात् प्रधान सेशन न्यायाधीश, एर्नाकुलम ने अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा विचारण न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण से सहमति व्यक्त की । अभियुक्त द्वारा उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । अभियुक्त-अपीलार्थी की ओर से दलील को इस अभिवाक् तक सीमित रखा गया कि अपराध पति-पत्नी के बीच अचानक हुई लड़ाई के कारण आवेश की तीव्रता में किसी पूर्व चिंतन के बिना किया गया था इसलिए दोषसिद्धि को धारा 302 से कम करके धारा 304 भाग-1 के अधीन किया जाना चाहिए । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – निस्संदेह, यह सत्य है कि अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3, जो कि उल्लेखनीय रूप से अपीलार्थी के भाई हैं, द्वारा यह साक्ष्य दिया गया था कि अपीलार्थी की पत्नी ने आत्महत्या की थी । धारा 313 के अधीन मूलत: प्रश्न करते समय अपीलार्थी ने भी यह आधार लिया था कि यह एक आत्महत्या का मामला है । मामले के प्रतिप्रेषण के पश्चात् धारा 313 के अधीन कथन में अपीलार्थी इस आधार पर दृढ़ रहा और यह मामला खड़ा किया कि उसकी माता और उसकी पत्नी के बीच झगड़ा होने के उपरांत उसकी माता द्वारा उसकी (अपीलार्थी) पिटाई की गई थी और इसके बाद वह शीघ्र ही सो गया था । जब वह सुबह-सुबह पेशाब करने के लिए उठा तो उसने मृतका को फांसी पर लटके हुए देखा । उसने स्पष्ट रूप से यह कथन किया कि अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 आए और मृतका द्वारा आत्महत्या करने के लिए प्रयुक्त की गई शाल की गांठ खोली । अपीलार्थी के अभिवाक् को स्वीकार करते हुए उच्च न्यायालय ने पूर्ववर्ती दौर में यह पाया था कि उससे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन उन परिस्थितियों के बारे में प्रश्न नहीं पूछे गए थे जो अभियोजन पक्ष द्वारा उसकी सह-अपराधिता के साक्ष्य के रूप में संबोधित किए गए थे । इस न्यायालय के समक्ष जो मामला गठित किए जाने की ईप्सा की गई है, वह भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 4 की प्रयोज्यता के इर्द-गिर्द घूमता है, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ झगड़ा होने के उपरांत हुई अचानक लड़ाई की बात

अंतर्वलित है । ऐसा झगड़ा न होना इस बात से स्पष्ट है कि अवसर मिलने के बावजूद अपीलार्थी ने उसके और उसकी पत्नी के बीच ऐसा कोई झगड़ा होने के बारे में कोई बात उपदर्शित नहीं की थी । जो मामला गठित किए जाने की ईप्सा की गई यद्यपि वह यह है कि उसने अत्यधिक शराब पी हुई थी, वह अभि. सा. 7 के निवास स्थान पर था, उसकी माता और उसकी पत्नी के बीच झगड़ा हुआ था, वह (मृतका) अभि. सा. 7 के निवास स्थान पर आई और वह उसे साथ लेकर वापस गई । सास और बहू के बीच झगड़ा होने के उपरांत जब वे घर पहुंचे थे तो उसकी माता द्वारा उसकी (अपीलार्थी) पिटाई की गई थी और वह शीघ्र ही सो गया था । साक्ष्य, जिसमें चिकित्सा साक्ष्य भी है, स्पष्ट है और दोनों न्यायालयों द्वारा ठीक ही मूल्यांकन किया गया है । इससे अप्रतिरोध्य रूप से केवल यह निष्कर्ष निकलता है कि यह आत्महत्या का मामला नहीं था अपितु असंदिग्ध रूप से मानव वध का मामला था । मृत्यु गला घोंटकर कारित की गई थी । अपीलार्थी और उसकी पत्नी एक अलग शयन कक्ष में रहते थे । नाखूनों की कतरन का हवाला दिया गया है, जिनमें रक्त लगा था । इस बात को स्पष्ट करने के प्रयास को विचारण न्यायालय द्वारा ठीक ही निरस्त किया गया था । अपीलार्थी की ओर से यह पक्षकथन है कि अपीलार्थी को क्षतियां पहुंची थीं । यह उल्लेखनीय है कि जब गला घोंटा जाता है तो जब तक विपदग्रस्त सोया न हो या बेहोश न हो, वह प्रतिरोध करेगा । आक्रामक को क्षतियां पहुंचना असामान्य बात नहीं है । इस मामले में इस न्यायालय ने मृतका की गर्दन के अतिरिक्त शरीर के अन्य अंगों पर भी क्षतियां होना पाया है । वे आक्रामक द्वारा हिंसा के कृत्य को इंगित करती हैं । इस मामले में इस बात का निर्णय करने तक के लिए नहीं कहा गया है कि वहां कोई अन्य व्यक्ति था, जो आक्रामक हो सकता था । वह केवल और केवल अपीलार्थी ही है, जिसे उन कृत्यों के लिए दोषी ठहराया जा सकता है, जिनके परिणामस्वरूप उसकी पत्नी की मृत्यु हुई थी । इस संबंध में, यह उल्लेखनीय है कि झगड़ा होने के बारे में अभियोजन का पक्षकथन अपीलार्थी की माता द्वारा तारीख 11 अक्तूबर, 1998 को झगड़ा खड़ा करने और मृतका द्वारा बाध्य होकर घर से जाने और बाहर अपने पति की तलाश करने के बारे में है । अपीलार्थी द्वारा अपने मित्रों के सामने अपनी पत्नी के साथ किए गए दुर्व्यवहार के बारे में भी उल्लेख है और

उसके पश्चात् रात्रि में अपीलार्थी द्वारा उसका गला घोंटने की घटना घटी थी । समझ में नहीं आता कि भारतीय दंड संहिता की धारा 300 का अपवाद 1 कैसे लागू होता है, जिसके बारे में अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा भी दलील दी गई है । अपवाद 1 लागू होने के लिए गंभीर और अचानक प्रकोपन के फलस्वरूप अभियुक्त द्वारा नियंत्रण की शक्ति को खो देना अपेक्षित है । मृतका द्वारा अवश्य ही गंभीर और अचानक प्रकोपन दिया जाना चाहिए । निस्संदेह, यदि अचानक प्रकोपन के फलस्वरूप किसी अन्य व्यक्ति की गलती या दुर्घटनावश मृत्यु कारित की जाती है, तो अपवाद 1 लागू हो सकता है । इस न्यायालय के समक्ष साक्ष्य में कोई प्रकोपन देने की बात को सिद्ध करने के लिए तनिक भी साक्ष्य नहीं लाया गया है, गंभीर और अचानक प्रकोपन की बात तो दूर । समान रूप से, निस्संदेह प्रतिप्रेषण के पश्चात् भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन लिखित कथन में ऐसा कोई मामला गठित नहीं किया गया है । इस न्यायालय के मत में, इस मामले के तथ्यों में अपवाद 4 की भी अप्रयोज्यता को लेकर कोई अंतर नहीं है । अपीलार्थी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपने लिखित कथन में प्रस्तुत किए गए वृत्तांत पर विचार करते हुए इस न्यायालय के समक्ष यह निष्कर्ष निकालने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि अचानक झगड़ा हुआ था, जिसके कारण अचानक लड़ाई हुई थी और इस कथन में यह भी वर्णित है कि वह शीघ्र ही सो गया था । उस समय तक कोई अचानक लड़ाई या अचानक झगड़ा होने के बारे में कोई सुगबुगाहट तक नहीं है । यह मूल्यांकन किया जाना भी आवश्यक है कि उनके शयन कक्ष में एकांत में क्या घटित हुआ था, उसके बारे में अपीलार्थी को अनन्य जानकारी होने के कारण साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के अधीन इसे अपीलार्थी द्वारा ही सिद्ध किया जाना चाहिए था । यह तथ्य है कि मामले के प्रतिप्रेषण के पश्चात् अपीलार्थी ने धारा 313 के अधीन अपना लिखित कथन फाइल करने के प्रक्रम पर भी संभाव्य रूप से यह मिथ्या मामला गठित करने की कोशिश की थी कि उसकी पत्नी की मृत्यु उसके द्वारा फांसी लगाने के कारण हुई थी । इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि जिस कृत्य के कारण मृत्यु हुई थी वह अपीलार्थी द्वारा कारित किया गया था । यह न्यायालय सुरक्षित रूप से इस आधार पर भी अग्रसर हो सकता है कि यह कृत्य आपराधिक

मानव वध की कोटि में आता है । इस मामले में विद्यमान परिस्थितियों और विशिष्ट रूप से मृतका को पहुंची क्षतियों पर विचार करने पर यह पूरी तरह स्पष्ट है कि यह कृत्य भारतीय दंड संहिता की धारा 300 की परिधि के अंतर्गत आएगा । यदि किसी कृत्य के परिणामस्वरूप मानव वध होता है जो हत्या की कोटि में नहीं आता, केवल और केवल तब यथास्थिति, धारा 304 भाग 1 या भाग 2 लागू होने का प्रश्न उद्भूत होता है । अपीलार्थी धारा 304 भाग 1 का उल्लेख करके हत्या के संघटकों को लागू करने के लिए अपने कृत्य के परिणाम से स्वयं को नहीं बचा सकता है, जिसमें "मृत्यु कारित करने के आशय से किया गया कार्य" अभिव्यक्ति अंतर्विष्ट है । इन दोनों के निहितार्थ में व्यापक अंतर है । भारतीय दंड संहिता की धारा 304 केवल उस मामले में लागू होगी जहां आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है । यदि आपराधिक मानव वध की कोटि में आने वाला कृत्य जिसे हत्या के अपराध के अधीन लाने के लिए चार मानदंडों में किसी का समाधान कर देता है, जो कि परस्पर अनन्य हैं, तब भारतीय दंड संहिता की धारा 304 लागू करने के लिए कोई गुंजाइश नहीं हो सकती है । दूसरी ओर, यदि कृत्य ऐसा मानव वध है जो धारा 300 में वर्णित पांच आपवादिक परिस्थितियों में से किसी के अंतर्गत आता है तब यह हत्या की कोटि में न आने वाला आपराधिक मानव वध होगा । ऐसे मामलों में जहां अभियुक्त यह सिद्ध करने में समर्थ हो जाता है, वह धारा 300 के अधीन अपवादों में से किसी अपवाद के फायदे का हकदार है तब उसके मामले पर भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के भाग 1 या भाग 2 के अधीन इस बात पर निर्भर करते हुए विचार किया जा सकता है कि क्या वह कृत्य जिससे मानव वध कारित हुआ था वह मृत्यु कारित करने के आशय से या इस ज्ञान से किया गया था कि इससे मृत्यु कारित हो जाना संभाव्य है । इसके अतिरिक्त, आपराधिक मानव वध के ऐसे मामले जिनमें धारा 300 के अधीन चार स्थितियों में से कोई लागू नहीं होती है, फिर भी भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के अधीन विचार किए जाने के लिए आपराधिक मानव वध का मामला होगा । तथापि, यदि मामला धारा 300 के चार भागों में से किसी के अंतर्गत आता है, तो धारा 304 को लागू करने का कोई कारण नहीं होगा । यदि वह कृत्य जिससे मृत्यु कारित हुई है और जो आपराधिक मानव वध है जिसे मृत्यु कारित करने

के आशय से किया गया है, तब वह कृत्य हत्या होगा । तथापि, यह उस कृत्य के अध्यधीन होगा जो पांच अपवादों में से कोई लागू न होने वाली परिस्थितियों में कारित किया गया है । अपीलार्थी की यह दलील कि यह हत्या की कोटि में न आने वाला मानव वध है और धारा 304 भाग 1 में "मृत्यु कारित करने के आशय से किया गया" शब्दों का जो अवलंब लिया गया है वह पूर्णतया सारहीन है । (पैरा 19, 20, 21, 23, 24 और 29)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1998]	[1998] 4 उम. नि. प. 61 = (1998) 4 एस. सी. सी. 336 : **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **लखमी** ;	4
[1996]	(1996) 6 एस. सी. सी. 457 : **पेरियासामी और एक अन्य** बनाम **तमिलनाडु राज्य** ;	4
[1977]	[1977] 3 उम. नि. प. 1104 = (1976) 4 एस. सी. सी. 382 : **आंध्र प्रदेश राज्य** बनाम **रायवरपू पुन्नय्या और एक अन्य** ;	28
[1976]	[1976] 2 उम. नि. प. 570 = (1976) 2 एस. सी. सी. 798 : **प्रताप** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ।	4

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2020 की दांडिक अपील सं. 38.

2012 की दांडिक अपील सं. 1549 में केरल उच्च न्यायालय, एर्नाकुलम के तारीख 29 अक्तूबर, 2018 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री रंजीत बी. मराड़, (सुश्री) लक्ष्मी एन. कैमल और महेंद्र कुमावत

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री नीश राजन शोनकर, (सुश्री) अनु के. जॉय, अलीम अनवर और शाज़ी जे. कोडन कंदत

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति के. एम. जोसेफ ने दिया ।

न्या. जोसेफ – आक्षेपित निर्णय द्वारा उच्च न्यायालय ने विद्वान् प्रधान सेशन न्यायाधीश, एर्नाकुलम के अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध और उसे आजीवन कठोर कारावास भुगतने तथा 10,000/- रुपए के जुर्माने से दंडादिष्ट करने वाले निर्णय की अभिपुष्टि की है ।

2. मृतका अपीलार्थी की पत्नी थी ।

3. अपीलार्थी और उसकी माता को अपीलार्थी की पत्नी के साथ अभिकथित रूप से क्रूरता करने और मृत्यु कारित करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 498क और 302 के अधीन आरोप-पत्रित किया गया था । अभियुक्तों को तारीख 28 फरवरी, 2005 के आदेश द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया था । उसके पश्चात् अपीलार्थी की माता का देहांत हो गया । तथापि, केरल उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने तारीख 29 मार्च, 2012 के निर्णय द्वारा राज्य द्वारा दोषमुक्ति के विरुद्ध फाइल की गई दांडिक अपील मंजूर की और अपीलार्थी से संबंधित दोषमुक्ति को अपास्त कर दिया तथा मामले को इस निदेश के साथ प्रतिप्रेषित कर दिया कि मामले का निपटारा भारतीय दंड संहिता की धारा 313 के अधीन परीक्षा के प्रक्रम से कार्यवाहियों को शुरू करके किया जाए । इसी प्रतिप्रेषण के पश्चात् प्रधान सेशन न्यायाधीश, एर्नाकुलम ने अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया, जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा विचारण न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण से सहमति व्यक्त की ।

4. हमने अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री रंजीत बी. मराड़ और प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल को सुना । यह पाए जाने पर कि अपीलार्थी की ओर से काउंसेल ने अपनी

दलील को इस अभिवाक् तक सीमित रखा है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि को भारतीय दंड संहिता की धारा 304, भाग 2 के अधीन परिवर्तित किया जाए, विशेष इजाजत याचिका में सूचना जारी की गई । अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह बताया कि यह ऐसा मामला है जहां मृतका यद्यपि गर्भवती हो गई थी किंतु उसका गर्भपात हो गया था । वह तनावग्रस्त थी । अपीलार्थी घटना की रात्रि को शराब पिए हुए था । अभियोजन पक्षकथन के अनुसार, उनमें लड़ाई-झगड़ा हुआ था । विद्वान् काउंसेल ने यह बताया कि यद्यपि वह सत्य है कि अपीलार्थी ने हो सकता है कि यह मामला गठित किया हो कि उसकी पत्नी ने आत्महत्या की थी, तो भी इस बात से न्यायालय को विधि के अनुसार मामले पर विचार करने से विमुख नहीं होना चाहिए । उन्होंने यह दलील दी कि अपीलार्थी को अवश्य ही भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 4 का फायदा दिया जाना चाहिए, जिसमें यह घोषित है कि आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है, यदि यह अचानक हुई लड़ाई में उनके पूर्व चिंतन के बिना तथा अचानक हुए झगड़े के उपरांत आवेश की तीव्रता में और अपराधी द्वारा असम्यक् लाभ लिए बिना और क्रूर तथा अप्रायिक रीति में कार्य किए बिना कारित की गई है । निस्संदेह, धारा 300 के अपवाद 4 के स्पष्टीकरण में यह उपबंधित है कि ऐसे किसी मामले में यह बात अतात्विक है कि इस पक्षकार ने प्रकोपन दिया था या पहले हमला किया है । विद्वान् काउंसेल ने यह बताया कि अभियोजन के वृत्तांत के अनुसार अपीलार्थी वास्तव में उस रात्रि में अभि. सा. 7 से अभि. सा. 9 के मकान पर गया था और उनके साथ उसने शराब पी थी । मृतका वहां उसको शराब पिलाने के लिए गई थी । उसे पत्नी द्वारा सहारा देकर घर लाया गया था । विद्वान् काउंसेल ने निम्नलिखित निर्णयों का अवलंब लिया है :–

(1) **प्रताप** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1]

(2) **पेरियासामी और एक अन्य** बनाम **तमिलनाडु राज्य**[2]

---

[1] [1976] 2 उम. नि. प. 570 = (1976) 2 एस. सी. सी. 798.

[2] (1996) 6 एस. सी. सी. 457.

(3) **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **लखमी**[1]

विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि न्यायालय ने यह पाया था कि अपीलार्थी को क्षतियां पहुंची थीं । इस बात से उनके बीच झगड़ा होने की बात पर आधारित अपीलार्थी का मामला मजबूत होता है और इसलिए यह एक ऐसा उपयुक्त मामला है जहां दोषसिद्धि को अवश्य ही भारतीय दंड संहिता की धारा 302 से भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग 2 में परिवर्तित किया जाना चाहिए । उन्होंने यह दलील दी कि न्यायालय ने उसे धारा 498क के अधीन आरोप से दोषमुक्त कर दिया था जिससे यह अभिप्रेत है कि अपीलार्थी द्वारा अपनी स्वर्गवासी पत्नी के साथ कोई दाम्पत्तिक क्रूरता नहीं की गई थी ।

5. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने जोरदार रूप से उच्च न्यायालय के आदेश का समर्थन किया । उन्होंने यह बताया कि यह गला घोंटकर हत्या करने का एक स्पष्ट मामला है ।

अभियोजन का पक्षकथन

6. अपीलार्थी का विवाह तारीख 31 अगस्त, 1997 को जेस्सी के साथ हुआ था । अभियोजन का यह पक्षकथन है कि जब से विवाह हुआ था, तब से जेस्सी के साथ अपीलार्थी और उसकी माता के हाथों शारीरिक और मानसिक क्रूरता की जा रही थी । तारीख 11 अक्तूबर, 1998 को, घटना वाले दिन अपीलार्थी की माता ने अपने घर में झगड़े का माहौल पैदा किया था । मृतका असहनीय परेशानी के कारण तंग होकर अपने पति की तलाश में घर से निकल गई और उसे अपने मित्रों के साथ शराब पीते हुए पाया । अपीलार्थी ने उनके सामने ही अपनी पत्नी पर हमला किया । उसके पश्चात् उसी दिन रात्रि को लगभग 11.00 बजे अपीलार्थी ने उसकी गला घोंटकर मृत्यु कारित कर दी । अभियोजन पक्ष की ओर से 21 साक्षियों की परीक्षा की गई । जो दस्तावेज चिह्नित किए गए थे, वे पी-1 से पी-18 थे । पी-1 रासायनिक विश्लेषक की रिपोर्ट है । उच्च न्यायालय द्वारा पहले दौर की मुकदमेबाजी, जहां विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी और उसकी माता को दोषमुक्त कर

---

[1] [1998] 4 उम. नि. प. 61 = (1998) 4 एस. सी. सी. 336.

दिया था, में दिए गए निर्णय में उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने यह पाया कि मृतका के दांपत्य गृह में रहने वाले सभी व्यक्ति पक्षद्रोही हो गए थे । अभि. सा. 2 से अभि. सा. 6, अभि. सा. 12 और अभि. सा. 14 अपीलार्थी के साले और सालियां हैं । अभि. सा. 7 से अभि. सा. 9 पड़ौसी थे । ये साक्षी पक्षद्रोही हो गए थे । अभि. सा. 1, मृतका के भाई और अभि. सा. 10, मृतका की माता ने निस्संदेह अभियोजन पक्ष के वृत्तांत का समर्थन किया । अपील न्यायालय ने यह पाया कि अपीलार्थी ने इस सत्य से इनकार नहीं किया है कि उस रात्रि में वह और उसकी पत्नी शयन कक्ष में थे । उसने कोई निश्चित आधार नहीं अपनाया कि मृतका को क्षतियां कैसे पहुंची थी ? इस सुसंगत समय पर क्षतियों को निर्दिष्ट करना उपयुक्त है । निम्नलिखित मृत्यु-पूर्व की क्षतियां हैं, जो मरणोत्तर परीक्षा प्रमाणपत्र, प्रत्यर्थी पी-9 में उल्लिखित हैं और वे अभि. सा. 16, डा. शिव सूदन द्वारा साबित की गई हैं :–

"1. माथे पर मध्य रेखा में नाक की भित्ती के 4 सें. मी. ऊपर 3×3×3×0.5 सें. मी. का नील ।

2. बाएं कान की पिण्डिका पर चेहरे के 3 सें. मी. बाएं तरफ 1×0.2 सें. मी. की उर्ध्वाधर खरोंच ।

3. गर्दन की दाईं तरफ मध्य रेखा के दाएं से 2.5 सें. मी. जबड़े की हड्डी से 2 सें. मी. नीचे 0.8 सें. मी. × 0.3 सें. मी. की लगभग अनुप्रस्थ खरोंच । पिछले टेंटुए के नीचे 2×1.5 सें. मी. क्षेत्र पर मांसपेशी दबी हुई पाई गई । टेंटुए की उपास्थि का दायां उर्ध्ववर्ती हार्न का अस्थि भंग पाया गया तथा चारों ओर रक्त का अंत:सरण था ।

4. छाती की दाईं तरफ नीचे की ओर सामने के भाग पर, दाईं हसुली की हड्डी के 24 सें. मी. नीचे और मध्य रेखा से 8 सें. मी. दाएं 1.5×0.2 सें. मी. की लगभग उर्ध्वाधर खरोंच ।

5. बाईं भुजा के बाह्य भाग पर, कंधे के सिरे से 8 सें. मी. नीचे 2.5×2×0.5 सें. मी. का नील ।

6. बाईं कोहनी के अंदरूनी भाग के नीचे 1×0.2 सें. मी. की खरोंच ।

7. दाएं प्रबाहु के पीछे के भाग पर कोहनी से 15 सें. मी. ऊपर 1.5×1.5×2 सें. मी. का नील ।

8. छाती के सामने वाले भाग पर दाईं हंसुली की हड्डी से 10 सें. मी. नीचे और मध्य रेखा के 1 सें. मी. दाएं 3×0.1 सें. मी. की चापनुमा भरी हुई खरोंच (जिस पर आसानी से हटने वाला काला खुरंड था) ।"

7. उच्च न्यायालय ने वृत्तांत को पुनर्ग्रहण करते हुए पहले दौर की मुकदमेबाजी में यह पाया कि अपीलार्थी अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के सुविधाजनक कथनों में अपनाए गए ढर्रे के अनुसार चला है, जो कि मामला डायरी में उनके इन कथनों के विपरीत था कि मृतका ने फांसी लगाकर आत्महत्या की थी । उच्च न्यायालय द्वारा यह भी पाया गया कि जब अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के साक्ष्य को अपीलार्थी को सुनाया गया था तो उसने इस कथन से सहमति व्यक्त की थी कि मृतका ने आत्महत्या की है । निर्णय से यह भी प्रकट होता है कि उच्च न्यायालय ने यह पाया कि सेशन न्यायाधीश द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन परीक्षा नहीं की गई थी । तद्नुसार ही दोषमुक्ति को अपास्त करने का निर्णय किया गया था । उच्च न्यायालय ने यह भी निदेश दिया कि विचारण न्यायाधीश को अवश्य ही साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के प्रयोग की गुंजाइश पर ठीक प्रकार से विचार करना चाहिए । सेशन न्यायाधीश को यह भी निदेश दिया गया था कि वह अभियुक्त की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन परीक्षा के प्रक्रम से नए सिरे से कार्यवाही जारी करके मामले का निपटारा करे ।

8. हम यह भी उल्लेख कर सकते हैं कि जब प्रधान सेशन न्यायाधीश ने प्रतिप्रेषण के पश्चात् मामले को हाथ में लिया तो उसने अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित निष्कर्ष अभिलिखित किए थे । यह पाया गया है कि मृतका की मृत्यु उसकी गर्दन पर डाले गए कुंद बल के परिणामस्वरूप तुरंत हुई थी । विद्वान् न्यायाधीश ने यह भी निष्कर्ष निकाला कि धारा 498क के अधीन मामला नहीं बनता है । अपीलार्थी और मृतका-पत्नी एक अलग शयन कक्ष में रहते थे । अभि.

सा. 1 ने मृतका के शव पर शारीरिक हिंसा के चिह्न पाए थे । अभि. सा. 1 ने अपनी मुख्य परीक्षा में यह अभिसाक्ष्य दिया कि अपीलार्थी के भाई और दो अन्य व्यक्तियों ने यह सूचित किया था कि उसकी बहिन गला खराब होने के कारण अस्पताल में भर्ती है । बाद में उसे यह सूचित किया गया कि उसकी फांसी लगाने के कारण मृत्यु हो गई है । इस साक्षी ने यह साक्ष्य दिया कि उसने अपनी बहिन की गर्दन पर गला घोंटने के चिह्नों और उन भागों पर नाखूनों के चिह्नों के अतिरिक्त माथे पर सूजन और बाईं गाल पर नीली खरोंच देखी थी । विद्वान् न्यायाधीश द्वारा यह पाया गया था कि अभि. सा. 1 द्वारा इन पहलुओं की प्रतिपरीक्षा नहीं की गई थी । न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपीलार्थी से प्रश्न पूछने के प्रक्रम से अग्रसर हुआ । अपीलार्थी ने लिखित कथन दिया । उसने यह दोहराया कि वह निर्दोष है । वह और उसकी पत्नी प्रसन्नतापूर्वक वैवाहिक जीवन जी रहे थे । उसकी पत्नी को उसके शराब पीने की आदत के बारे में नाराजगी और आपत्ति थी । वह कोई संतान न होने के कारण क्षुब्ध थी । न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा की गई यह स्वीकारोक्ति पाई कि तारीख 11 अक्तूबर, 1998 को अभि. सा. 7 से अभि. सा. 9 और स्वयं उसने अभि. सा. 7 के मकान पर शराब पी थी । लगभग 7.00 बजे अपराह्न में उसकी पत्नी उसको ढूंढने के लिए वहां आई थी और वह उसके साथ चला गया था । उसका यह बयान है कि उसने अत्यधिक शराब पी हुई थी और उसकी पत्नी ने ही उसे सहारा दिया था तथा उसे शराब के नशे के कारण चलने में कठिनाई हो रही थी । उसने अपना एक अलग शयन कक्ष होने की बात स्वीकार की थी । उसने अपनी माता और पत्नी के बीच कहा-सुनी होते हुए देखा था । क्योंकि वह नशे में था इसलिए वह दोनों को अलग नहीं कर सका था । उसकी माता ने उसकी (अपीलार्थी) पिटाई की और उसे होठों पर क्षतियां पहुंची थीं । वह शीघ्र ही गहरी नींद में सो गया था । सुबह-सुबह वह पेशाब करने के लिए उठा और उसी समय ही उसने मृतका को खिड़की की रेलिंग से बंधी हुई शाल द्वारा फांसी पर लटके हुए देखा और उसके चिल्लाने पर अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 कमरे में आए । उन्होंने शाल की गांठ खोली और जेस्सी के शव को बिस्तर पर लेटा दिया था । इस वृत्तांत को विद्वान् प्रधान सेशन न्यायाधीश द्वारा एक नया बयान होना पाया था और ऐसा कथन

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन मूल रूप से प्रश्न करते समय या अभियोजन साक्षियों की प्रतिपरीक्षा करते समय नहीं किया गया था । विद्वान् न्यायाधीश ने मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट में माथे के मध्य भाग पर सूजन, बाईं गाल पर खरोंच होने का उल्लेख किया था । शव से नाखून की कतरन और रक्त का नमूना लिया गया था । अपीलार्थी के नाखूनों की भी कतरन ली गई थी । अपीलार्थी के अनुसार नाखून की कतरन में रक्त मृतका और अपीलार्थी द्वारा मृतका की गर्दन के चारों ओर बंधी हुई गांठ को खोलने के प्रयत्न में आया था । तथापि, न्यायालय ने यह पाया कि अभि. सा. 14, डाक्टर ने यह उल्लेख किया है कि जब एक बार मृतक/मृतका की गर्दन के चारों ओर बंध को कसकर बांध दिया जाता है, तो विपदग्रस्त बेहोश हो जाता है और मृतक या मृतका बंध को ढीला करने के लिए अपने शरीर के ऊपरी अंगों को उठाने में समर्थ नहीं होगा । न्यायालय ने यह भी पाया कि मामले के प्रतिप्रेषण के पश्चात् दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन दिए गए लिखित कथन में यह कहा गया था कि अभि. सा. 1 और अभि. सा. 3, अपीलार्थी के भाइयों ने उस शाल की गांठ खोली थी, जिसे अभिकथित रूप से मृतका द्वारा आत्महत्या करने के लिए प्रयुक्त किया गया था । अभि. सा. 15 ने यह भी साक्ष्य दिया कि यदि विपदग्रस्त व्यक्ति हमला करने वाले को नोचता है, तो रक्त और चमड़ी का अंश उसके नाखूनों की कतरन के नीचे मौजूद होगा । मामले के प्रतिप्रेषण के पश्चात् अपीलार्थी द्वारा दिए गए लिखित कथन में जो यह वृत्तांत प्रस्तुत किया जाना चाहा था कि घटना की तारीख को उसकी माता और उसकी पत्नी के बीच जब लड़ाई-झगड़ा हुआ था तो उसकी माता द्वारा उस पर भी हमला किया गया था, इस वृत्तांत को बढ़ा-चढ़ा कर कहा गया और अस्वीकार्य पाया गया । न्यायालय ने यह भी पाया कि घटना अपीलार्थी के शयन कक्ष में घटी थी और वह भी रात्रि के दौरान तथा वहां कमरे में कोई अन्य व्यक्ति नहीं था । इसलिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के अधीन उत्तरदायित्व अपीलार्थी पर था । यह पाया गया था कि अपीलार्थी ने गला घोंटकर हत्या की थी और आत्महत्या की कहानी अस्वीकार्य पाई गई थी । उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी का यह पक्षकथन भी पाया कि उसकी पत्नी ने उनके कमरे के खिड़की की ग्रिल से लटककर 1.30 बजे पूर्वाह्न में आत्महत्या की थी । उच्च न्यायालय इस बात से सहमत हुआ

कि एकमात्र संभाव्य परिकल्पना अपीलार्थी द्वारा मानव वध कारित करने की है ।

विश्लेषण

9. हम सामग्री और उन निष्कर्षों, जो न्यायालयों द्वारा समवर्ती रूप में निकाले गए हैं, के आधार पर सुरक्षित रूप से यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि अपीलार्थी द्वारा गठित किया गया आत्महत्या का मामला पूर्ण रूप से एक मिथ्या अभिवाक् था । यह पूर्णतया स्पष्ट है कि अपीलार्थी ने अपनी पत्नी की गला घोंटकर मृत्यु कारित की थी । हमने पहले ही क्षतियों का उल्लेख किया है । गर्दन पर क्षतियों के अतिरिक्त, हमने नाक के मध्य भाग के ऊपर माथे की मध्य रेखा पर नील और चेहरे (गाल पर) बाईं तरफ खरोंच होना पाया था । बाईं भुजा के बाह्य भाग पर नील था और बाईं कोहनी के अंदरूनी भाग के पीछे खरोंच थी तथा दाएं प्रबाहु के पीछे के भाग पर नील था । यह क्षति संख्या 2 और 3 के अतिरिक्त है जिसका स्पष्ट रूप से गला घोंटकर मृत्यु कारित करने का संकेत करने के रूप में मूल्यांकन किया गया है ।

10. **प्रताप** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में पानी को लेकर दो व्यक्तियों के बीच गरमा-गरमी हुई थी । विवाद बढ़ा और लड़ाई-झगड़ा होने लगा । बंदूक से एक गोली चलाई गई । बंदूक की गोली से पहुंची क्षति से विपदग्रस्त की मृत्यु हो गई । अपीलार्थी का यह अभिवाक् था कि मृतक उस पर भाले से प्रहार करने वाला ही था और उसने आत्म-रक्षा में गोली चलाई थी । न्यायमूर्ति एम. एच. बेग ने न्यायमूर्ति आर. एस. सरकारिया से सहमत होते हुए यह सम्मत निर्णय लिखा कि अपीलार्थी ने यह मामला साबित कर दिया है कि उसने अपनी आत्म-रक्षा में कार्य किया था और निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया :–

> "30. इस मामले में जो प्रश्न उद्धृत होता है, वह यह है कि भले ही अधिसंभाव्यताओं की तुलना द्वारा प्रतिरक्षा कथन पूर्ण रूप से साबित किया गया अभिनिर्धारित न किया जाए, तो भी क्या साक्ष्य में ऐसे पर्याप्त संकेत न थे जो अधिसंभाव्य रूप से सत्य थे जो स्वयं अभियोजन साक्षियों द्वारा किए गए कुछ कथनों से प्रकट हो गए ? उन्होंने राम नाथ के जब वह आगे बढ़ रहा था, शत्रुता

पूर्ण और धमकी भरे रूप के प्रति संकेत किया है । क्या इससे प्रतिरक्षा कथन की इस बात की संपुष्टि नहीं होती है कि जब वह वास्तव में धमकाने वाली मुद्रा में भाला सहित आक्रमण करने के लिए आगे बढ़ रहा था, उस समय ही उस पर गोली चलाई गई ?

31. ऋषिकेश सिंह वाले मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के नौ न्यायाधीशों से मिलकर बनी न्यायपीठ ने बहुमत द्वारा इस न्यायालय द्वारा विचार-विमर्श किए गए विनिश्चयों को स्पष्ट करते हुए और उनका अवलम्ब लेते हुए (पृष्ठ 51 पर) यह मत व्यक्त किया गया –

> 'वह अभियुक्त जो किसी अपवाद का अभिवाक् करता है यदि साक्ष्य पर (जिसमें साधारण अपवाद के अभिवाक् के समर्थन में दिया गया साक्ष्य भी सम्मिलित है) पूरी तरह से विचार करने पर न्यायालय के दिमाग में अभियुक्त के दोषों की बाबत युक्तियुक्त संदेह सृष्ट कर दिया जाता है तो वह दोषमुक्त किए जाने का हकदार बन जाता है ।'

उस मामले में साक्ष्य अधिनियम की धारा 105 के उपबंधों के संबंध में इस न्यायालय का विनिश्चय मैंने (पृष्ठ 97-98 पर) इस प्रकार संक्षेप में वर्णित किया था –

> "अपवाद के लिए अभियुक्त की दलीलों में से कोई दलील तीन प्रक्रमों में से किसी के अंतर्गत आ सकती है जो बहुत बारीकी से चिह्नित नहीं है । यह बात मामले में मौजूद सम्पूर्ण साक्ष्य के प्रभाव पर निर्भर है जिसका निर्णय एक प्रज्ञावान व्यक्ति के मानदण्ड के द्वारा अधिसंभाव्यताओं को सावधानी से तोलकर या उन्हें बराबर करके निर्णीत किया जा सकता है । ये प्रक्रम हैं, पहला, अधिनियम की धारा 105 के अंत में दिए गए बाध्यकारी प्रारंभिक अनुमान को हटाना, दूसरा, अपराध के किसी तत्व के अस्तित्व में रहने की बाबत युक्तियुक्त संदेह सृष्ट करना और तीसरा, अपवाद का पूरा साक्ष्य जो 'अधिसंभाव्यताओं के बाहुल्य' द्वारा उपलब्ध हो, जिसके अंतर्गत अभियुक्त के अभिवाक् के पक्ष में अधिसंभाव्यता,

यदि थोड़ी भी हो, मानी जाती है । अभियुक्त दोषमुक्त किए जाने के लिए हकदार नहीं है यदि उसका अभिवाक् प्रथम प्रक्रम से परे नहीं जाता है । दूसरे प्रक्रम में वह केवल संदेह का फायदा अभिप्राप्त करके दोषमुक्त किए जाने के लिए हकदार बन जाता है । मेरे मतानुसार प्रभू वाले मामले में बहुसंख्यक न्यायाधीशों के मत का यही प्रभाव है जिसका केवल प्रथम दो प्रक्रमों में प्रत्यक्ष रूप से संबंध है । उच्चतम न्यायालय के विनिश्चयों में अब तक अन्तिम दो प्रक्रमों पर विचार किया गया है किंतु प्रथम प्रक्रम पर उसने ऐसे किसी मामले में, जो उसके पास लाया गया है, प्रत्यक्ष या पृथक् रूप से अभी तक कोई विचार नहीं किया है ।'

38. साक्ष्य अधिनियम की धारा 105 के उपबंधों में, जो ऐसे मामलों में लागू होते हैं, उस अभियुक्त पर, जो अपवाद की दलील देता है, वास्तव में दो प्रकार के भार अंतर्विष्ट हैं । प्रथमतः, उन परिस्थितियों के अस्तित्व को साबित करने का सिद्धि-भार अधिकथित किया गया है जिससे मामला भारतीय दण्ड संहिता में के किसी साधारण अपवाद के अधीन आ जाए या भारतीय दंड संहिता के किसी विशेष अपवाद के अंतर्गत आ जाए या उसी संहिता के या किसी विधि के जिसमें वह अपराध परिभाषित किया गया हो, किसी अन्य भाग में अंतर्विष्ट किसी विशेष अपवाद या उपबंध के अंतर्गत आ जाए और द्वितीयतः ऐसे साक्ष्य के पुरःस्थापित करने या दर्शाने का भार होता है जो अंतिम भाग के परिणामस्वरूप है जिसमें यह वर्णित है कि 'न्यायालय ऐसी परिस्थितियों के अभाव में ऐसी उपधारणा करेगा' । साक्ष्य अधिनियम की धारा 105 के अंत में इस बाध्यकर उपधारणा का प्रभाव यह है कि न्यायालय को यह अनुमान करके कार्रवाई करनी चाहिए कि ऐसे कोई तत्व अस्तित्व में नहीं हैं जो आपराधिक दायित्व के, जो अन्यथा होता, अपवाद स्वरूप आत्म-प्रतिरक्षा की दलील पर विचार करने के लिए विचार योग्य हो सकते हैं । किंतु जब दोनों पक्ष अपने-अपने विवरणों की बाबत साक्ष्य दे देते हैं तो अभियुक्त अभिलेख पर के किसी भी साक्ष्य से, चाहे वह अभियोजन या प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा दिया गया

हो, यह दर्शित कर सकता है कि आज्ञापक उपधारणा समाप्त कर दी गई है । अंतिम वर्णित भार वास्तव में दलील को पूर्ण रूप से सिद्ध करने का भार नहीं है । किंतु वह केवल कुछ साक्ष्य को आत्म प्रतिरक्षा की दलील का न्यायोचित्य साबित करने के लिए पुर:स्थापित करने या उसका अस्तित्व में होना दर्शाने के लिए है । बाध्यकर उपधारणा के परिणामस्वरूप भार का निर्वहन करना कठिन नहीं है और यह हो सकता है कि उसका निराकरण दोषमुक्ति के लिए पर्याप्त न हो ।"

11. **पेरियासामी और एक अन्य** बनाम **तमिलनाडु राज्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में अभियुक्तों ने, जिनकी संख्या 2 थी, ने अभिकथित रूप से मृतक पर हमला किया था । यद्यपि सेशन न्यायाधीश ने अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया था, किंतु उच्च न्यायालय ने दोनों अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन और एक अन्य अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन दोषसिद्ध किया । इस न्यायालय ने यह पाया कि अपीलार्थी द्वारा क्षतियां भोंथरे आयुधों द्वारा कारित की गई थीं । इस दलील पर विचार करते हुए कि अपराध धारा 304 भाग 1 से ऊपर नहीं आता है, न्यायालय ने यह पाया कि यद्यपि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार नहीं बताया गया था, तो भी अपीलार्थी द्वारा यह दलील दी गई थी कि ऐसे अभिवाक् का अभाव अपवाद पर आधारित प्रतिरक्षा का अभिवाक् करने के आड़े नहीं आएगा । न्यायालय ने निम्नलिखित उल्लेख किया :–

"उक्त आनुकल्पिक दलील पर विचार करते समय हमें साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 105 को ध्यान में रखना चाहिए । इसमें सबूत के भार का यह नियम विहित किया गया है कि मामले को अपवादों में से किसी अपवाद के भीतर लाने वाली परिस्थितियों की विद्यमानता को साबित करने का भार अभियुक्त पर होता है और न्यायालय ऐसी परिस्थितियों के विद्यमान न होने की उपधारणा करेगा । <u>उक्त नियम सबूत के स्वत: सिद्ध इस नियम (धारा 101 में उपदर्शित) को कम नहीं करता है कि अभियोजन पक्ष</u>

को अवश्य यह सिद्ध करना चाहिए कि अभियुक्त ने उसके विरुद्ध आरोपित अपराध कारित किया था । यह परंपरागत नियम कि अभियोजन पक्ष को अपराध युक्तियुक्त संदेह के परे अपराध को सिद्ध करना होता है, सभी मामलों में लागू होता है सिवाय वहां के जहां किसी विशिष्ट कानून में अन्यथा विहित किया गया हो । धारा 105 में इन शब्दों के साथ सृजित विधिक उपधारणा कि 'न्यायालय ऐसी परिस्थितियों की गैर मौजूदगी की उपधारणा करेगा', का आशय अभियोजन पक्ष के उपर्युक्त परंपरागत भार को विस्थापित करने का नहीं है । यह केवल वहां होता है, जहां अभियोजन पक्ष ने इस युक्तियुक्त निश्चितता के साथ अपने पक्षकथन को साबित कर दिया है कि न्यायालय मामले को अपवादों में से किसी अपवाद के भीतर लाने वाली परिस्थितियों की गैर-मौजूदगी के संबंध में उपधारणा कर सकता है । यह उपधारणा न्यायालय को यह अवधारण करने के लिए मदद करती है कि अपवाद को लागू करने के लिए आवश्यक तथ्यों को साबित करने का भार किस पर है और अभियुक्त अभियोजन पक्ष के असदृश 'अधिसंभाव्यताओं की प्रबलता' द्वारा भार का निर्वहन कर सकता है । किंतु ऐसी कोई उपधारणा नहीं है कि मानव वध के हर मामले में आक्रामक अभियुक्त ही हो । यदि यहां तक कि अभियोजन पक्ष के साक्ष्य से भी कोई युक्तियुक्त संदेह हो कि घटना में आक्रामक अभियुक्त नहीं था अपितु मृतक पक्ष आक्रामक रहा था, तब उस युक्तियुक्त संदेह का फायदा अभियुक्त को दिया जाना चाहिए, यह बात मायने नहीं रखती कि उसने उस दिशा में कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया था ।

18. उपरोक्त विधिक स्थिति को न्यायमूर्ति सुब्बाराव (जैसे कि वह उस समय थे) द्वारा एक मामले में दहया भाई छग्गन भाई ठक्कर **बनाम** गुजरात राज्य [ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 1563 = (1964) 2 क्रिमिनल ला जर्नल 472] जहां अभियुक्त ने भारतीय दंड संहिता की धारा 84 के अधीन अपवाद का अभिवाक् किया था,

संक्षिप्त और सारभूत रूप से निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया था :–

> 'अत: अभियोजन पक्ष मानव वध के किसी मामले में युक्तियुक्त संदेह के परे यह साबित करेगा कि अभियुक्त ने मृत्यु दंड संहिता, 1860 की धारा 299 में विहित अपेक्षित आशय के साथ की थी । यह साधारण भार कदापि स्थानांतरित नहीं होता है और यह सदैव अभियोजन पक्ष पर होता है ..... यदि न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई सामग्री, जैसे कि मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य, उपधारणाएं, स्वीकारोक्तियां या यहां तक कि अभियोजन का साक्ष्य, से 'प्रज्ञावान व्यक्ति' की कसौटी का समाधान होता है तो अभियुक्त को अपने भार का निर्वहन करना होगा । इस प्रकार प्रस्तुत किया गया साक्ष्य, साक्ष्य अधिनियम की धारा 105 के अधीन भार का निर्वहन करने के लिए पर्याप्त न भी हो, किंतु इससे न्यायाधीश के मन में स्वयं अपराध के एक या अन्य आवश्यक संघटकों के संबंध में युक्तियुक्त संदेह पैदा हो सकता है ।'

20. उपरोक्त विधि को ध्यान में रखते हुए हमने यह अभिनिश्चित करने के लिए साक्ष्य की संवीक्षा की कि क्या मृतक आक्रामक हो सकता था । न तो अभि. सा. 1 और न ही अभि. सा. 2 यह बता सके कि घटना का आरंभ कैसे हुआ था । इस संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता है कि उनके उस स्थान पर पहुंचने से पूर्व पहले ही कुछ घटनाएं घटी होंगी । अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 ने एक सुअर की चीख सुनी थी । उन्होंने कोई झगड़ा होने की आवाज भी सुनी थी । जब वे घटनास्थल पर पहुंचे, तो उन्होंने नजदीक ही वध किए गए सुअर के शव को पड़े हुए देखा । अभियोजन पक्ष द्वारा सुझाया गया हेतु द्वितीय अपीलार्थी के प्रति विद्वेष रखने के लिए मृतक के लिए भी पर्याप्त था । इसके अतिरिक्त, दोनों पक्षों का उस दिन सवेरे एक-दूसरे से इस पूर्व ज्ञान या विचार के बिना एकाएक आमना-सामना हुआ होगा कि मृतक निर्णायक समय पर शौच के लिए केले के बाग में जा सकता है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

12. इस न्यायालय ने यह पाया कि यह युक्तियुक्त संदेह करने के लिए परिस्थितियां पर्याप्त थीं कि अभियुक्त ने द्वितीय अपीलार्थी के साथ झगड़ा किया होगा और उसके पश्चात् अन्य घटनाएं घटी तथा इस आधार पर उन्हें हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध के लिए दायी ठहराया गया था ।

13. **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **लख्मी** (उपर्युक्त) वाले मामले में प्रत्यर्थी की पत्नी की मृत्यु का मामला अंतर्वलित था । प्रत्यर्थी और मृतका के दो बच्चे थे । अभियोजन का पक्षकथन यह था कि पति-पत्नी के बीच आंतरिक कलह रहती थी । पत्नी ने अपीलार्थी पर शराब पीने में अपना धन उड़ाने का दोषारोपण किया था । यह भी अभिकथन किया गया कि प्रत्यर्थी ने घटना के दिन सुबह-सुबह मृतका के सिर पर प्रहार करके उसकी खोपड़ी को चकनाचूर कर दिया, जिसके कारण उसकी तुरंत मृत्यु हो गई । विचारण न्यायालय ने प्रत्यर्थी को दोषसिद्ध किया किंतु उच्च न्यायालय ने उसे दोषमुक्त कर दिया । हम पैरा 8 का उल्लेख कर सकते हैं । यह निम्न प्रकार से है :–

> "8. विधिक प्रतिपादना के रूप में, हम उच्च न्यायालय से सहमत नहीं हो सकते कि यदि संहिता की धारा 313 के अधीन लेखबद्ध अभियुक्त के कथन में अपराध में फंसाने वाली स्वीकृतियां अंतर्विष्ट हैं तो इसका कोई मूल्य या उपयोगिता नहीं है । अभियोजन साक्ष्य में अभियुक्त के विरुद्ध प्रकट अपराध में फंसाने वाली परिस्थितियों के निर्देश में अभियुक्त की परीक्षा के लिए विधि की आवश्यकता किसी विचारण में कोई रस्म अदायगी नहीं है और न ही वह मात्र औपचारिकता है । यह एक आज्ञापक प्रयोजन है । यह न्यायालय को यह जानने में समर्थ बनाता है कि अभियोजन द्वारा अभ्यारोपी व्यक्ति के विरुद्ध बताई गई परिस्थितियों के बारे में उसे क्या कहना है । प्रश्नों के उत्तर यदा-कदा सपाट इनकार हो सकते हैं या उन परिस्थितियों का पूर्णतया खंडन किया जा सकता है । कुछ मामलों में अभियुक्त अपराधकारी परिस्थितियों के बारे में कुछ स्पष्टीकरण पेश करेगा । अभियुक्त विरले ही अपने विरुद्ध पेश की गई अपराधकारी परिस्थितियों को स्वीकार या अंगीकार भी कर सकता है । ऐसा वह कदाचित विधिक दृष्टि से मान्य प्रतिरक्षा अपनाने के प्रयोजन के लिए कर सकता है । ऐसे सभी मामलों में

न्यायालय को उन पहलुओं के बारे में उसका वृत्तांत जानने का लाभ मिल जाता है और इससे न्यायालय को मामले में साक्ष्य को कारगर ढंग से मूल्यांकन करने और समझने में मदद मिलती है । यदि कोई अभियुक्त अपने विरुद्ध साक्ष्य में प्रकट कोई अपराध में फंसाने वाली परिस्थितियों को स्वीकार करता है तो इस बात की कोई आवश्यकता नहीं है कि उन स्वीकृतियों की मात्र इस आधार पर पूर्णतया उपेक्षा की जाए कि ऐसी स्वीकृतियां प्रतिरक्षा युक्ति के रूप में पेश की गई थीं ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

14. अत: हमें यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि अभियुक्त द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन किए गए कथन की अनदेखी नहीं की जा सकती है, भले ही इसमें अपराध में फंसाने वाली स्वीकारोक्तियां अंतर्विष्ट हों और न्यायालय, जहां साक्ष्य उपलब्ध हो, दोषिता का निर्णय देने के लिए अग्रसर हो सकता है । पूर्वोक्त मामले में अभियुक्त ने विनिर्दिष्ट रूप से यह कथन किया था कि उसने अपनी पत्नी की हत्या कुंडे से की थी न कि फाली से । न्यायालय ने यह भी पाया कि दंड संहिता की धारा 84 के अधीन जो प्रतिरक्षा लेने की ईप्सा की गई है, उसमें कोई गुणागुण नहीं है । तथापि, इस न्यायालय ने निम्नलिखित उल्लेख किया :–

"16.....तथापि, हमारी जानकारी में यह बात आई है कि अभियुक्त ने दूसरी आनुकल्पिक प्रतिरक्षा अपनायी थी जो अभियोजन साक्षियों की प्रतिरक्षा के दौरान सुझाई गई है अर्थात् उसकी पत्नी और अभि. सा. 2 (रामे) घटना की तारीख को प्रात:काल चारपाई पर एक साथ थे । यदि उस सुझाव पर विचार किया जाए तो हमारा ध्यान इस प्रश्न पर जाता हे कि भारतीय दंड संहिता की धारा 300 का अपवाद 1 का फायदा दिया जाना चाहिए अथवा नहीं ?

17. विधि यह है कि ऐसे अपवाद को साबित करने का भार अभियुक्त पर होता है । किंतु मात्र यह तथ्य कि अभियुक्त ने भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद सं. 1 का बिना उल्लेख किए भारतीय दंड संहिता की धारा 313 के अधीन परीक्षा

के दौरान दूसरी आनुकल्पिक प्रतिरक्षा अपनायी थी, तो उसे अपवाद के फायदे से वंचित करने के लिए पर्याप्त नहीं है, यदि न्यायालय उस साक्ष्य में से ऐसी सामग्री ढूंढ निकाल सके जो उस अपवाद तक ले जाने वाली परिस्थितियों के विद्यमान होने का संकेत करती हो । विधि ऐसी नहीं है कि ऐसी प्रतिरक्षा स्थापित करने में विफल रहने से हमेशा के लिए अपवाद पर निर्भर करने का अधिकार समाप्त हो जाएगा । यह बात स्वत: सिद्ध है कि किसी तथ्य को साबित करने के लिए अभियुक्त पर भार का निर्वहन या तो प्रतिरक्षा साक्ष्य से या अधिसंभाव्यता की प्रबलता को दर्शित करके अभियोजन साक्ष्य के माध्यम से भी किया जा सकता है ।

18. उपरोक्त संदर्भ में हम यह अभिनिश्चित करना उपयोगी समझते हैं कि संभवत: अभियुक्त को अपनी पत्नी को मारने के लिए किस बात ने प्रेरित किया होगा । अभियोजन पक्षकथन जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, यह है कि अभियुक्त की अपनी पत्नी से अच्छी नहीं पट रही थी क्योंकि वह हमेशा उसकी शराब पीने की आदत के खिलाफ बोलती रहती थी । हम उस रीति पर विचार करते समय यह सोचने के लिए प्रवृत्त हैं कि वह अपनी जवान पत्नी पर अचानक झपट पड़ा था जिसने उसके दो बच्चों को जन्म दिया था और उषाकाल में ही उसके सिर को क्षत-विक्षत कर डाला था, ऐसा करने में उसका कुछ अन्य प्रबल हेतु रहा होगा जो (बात) संभवतया हत्या करने के थोड़े समय पूर्व घटी होगी । साक्ष्य में थोड़ी बहुत धुंधली दिखाई देने वाली कुछ मोटी-मोटी बातें हमारी सोचने की दिशा में मदद करती हैं ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

15. इस न्यायालय ने साक्ष्य का विश्लेषण करते हुए यह भी अभिनिर्धारित किया कि मामले की विशेषताओं से दर्शित होता है कि अपीलार्थी ने अपनी पत्नी और अभि. सा. 2 के बीच कोई कामुक बात देख ली थी । इस बात ने न्यायालय को यह निष्कर्ष निकालने के लिए प्रेरित किया कि प्रत्यर्थी भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 1 के फायदे का हकदार है और प्रत्यर्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा

304 भाग 1 के अधीन दोषसिद्ध किया गया ।

16. जो सिद्धांत अधिकथित किए गए हैं, उन पर कोई संशय नहीं किया जा सकता है । तथापि, विधि के सिद्धांतों का किसी विशिष्ट मामले में अभिप्राप्त होने वाले तथ्यों को ध्यान में रखे बिना मूल्यांकन या लागू नहीं किया जा सकता है । इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि यह साबित करने का भार कि किसी विशिष्ट मामले में मामला बनता है या नहीं, तब तक अभियोजन पक्ष पर होता है जब तक कि विधि में अन्यथा घोषित न हो । निस्संदेह धारा 302 के अर्थांतर्गत हत्या का मामला होने के लिए अपराध अवश्य ही आपराधिक मानव वध होना चाहिए । इसलिए कि यह आपराधिक मानव वध है, यह अपराध अवश्य ही भारतीय दंड संहिता की धारा 299 के अंतर्गत आना चाहिए किंतु उन सभी कृत्यों से, जो आपराधिक मानव वध की कोटि में आते हैं, हत्या का गठन नहीं होता है ।

17. इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि यह साबित करने का भार कि मामला भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अधीन अपवादों में से किसी अपवाद के अंतर्गत आता है, अभियुक्त पर होता है । यह भी समान रूप से सत्य है कि कोई प्रतिरक्षा साक्ष्य प्रस्तुत किए बिना भी अभियुक्त के लिए उक्त भार का निर्वहन अभियोजन साक्ष्य, जिसके अंतर्गत अभियोजन साक्षियों की प्रतिपरीक्षा भी सम्मिलित है, के फलस्वरूप प्रकट होने वाली सामग्री के प्रतिनिर्देश करके करना संभव हो सकता है । यह कसौटी अधिसंभाव्यता की प्रबलता पर होती है ।

18. यह तथ्य कि एक मिथ्या मामला गठित किया गया है, स्वयमेव यह बात अभियुक्त को यह तथ्य सिद्ध करने के अधिकार से वंचित नहीं हो सकता है कि उसके विरुद्ध मामला फिर भी भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अधीन अपवादों में से किसी अपवाद के अंतर्गत आता है । विधि आनुकल्पिक अभिवाकों को स्वीकार करने से वर्जित नहीं करती है । अंततोगत्वा, इस प्रश्न का विनिश्चय, निस्संदेह, साक्ष्य के मूल्यांकन और विधि की उन अपेक्षाओं के आधार पर किया जाएगा जो विधि के विशिष्ट उपबंध में दी गई हैं । अभियुक्त युक्तियुक्त संदेह के फायदे का भी हकदार हो सकता है ।

19. इन सिद्धांतों को लागू करते हुए, इस मामले के तथ्यों की परीक्षा करते हैं । निस्संदेह, यह सत्य है कि अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3, जो कि उल्लेखनीय रूप से अपीलार्थी के भाई हैं, द्वारा यह साक्ष्य दिया गया था कि अपीलार्थी की पत्नी ने आत्महत्या की थी । धारा 313 के अधीन मूलत: प्रश्न करते समय अपीलार्थी ने भी यह आधार लिया था कि यह एक आत्महत्या का मामला है । मामले के प्रतिप्रेषण के पश्चात् धारा 313 के अधीन कथन में अपीलार्थी इस आधार पर दृढ़ रहा और यह मामला खड़ा किया कि उसकी माता और उसकी पत्नी के बीच झगड़ा होने के उपरांत उसकी माता द्वारा उसकी (अपीलार्थी) पिटाई की गई थी और इसके बाद वह शीघ्र ही सो गया था । जब वह सुबह-सुबह पेशाब करने के लिए उठा तो उसने मृतका को फांसी पर लटके हुए देखा । उसने स्पष्ट रूप से यह कथन किया कि अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 आए और मृतका द्वारा आत्महत्या करने के लिए प्रयुक्त की गई शाल की गांठ खोली । अपीलार्थी के अभिवाक को स्वीकार करते हुए उच्च न्यायालय ने पूर्ववर्ती दौर में यह पाया था कि उससे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन उन परिस्थितियों के बारे में प्रश्न नहीं पूछे गए थे जो अभियोजन पक्ष द्वारा उसकी सह-अपराधिता के साक्ष्य के रूप में संबोधित किए गए थे । हमारे समक्ष जो मामला गठित किए जाने की ईप्सा की गई है, वह भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 4 की प्रयोज्यता के इर्द-गिर्द घूमता है, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ झगड़ा होने के उपरांत हुई अचानक लड़ाई की बात अंतर्वलित है । ऐसा झगड़ा न होना इस बात से स्पष्ट है कि अवसर मिलने के बावजूद अपीलार्थी ने उसके और उसकी पत्नी के बीच ऐसा कोई झगड़ा होने के बारे में कोई बात उपदर्शित नहीं की थी । जो मामला गठित किए जाने की ईप्सा की गई यद्यपि वह यह है कि उसने अत्यधिक शराब पी हुई थी, वह अभि. सा. 7 के निवास स्थान पर था, उसकी माता और उसकी पत्नी के बीच झगड़ा हुआ था, वह (मृतका) अभि. सा. 7 के निवास स्थान पर आई और वह उसे साथ लेकर वापस गई । सास और बहू के बीच झगड़ा होने के उपरांत जब वे घर पहुंचे थे तो उसकी माता द्वारा उसकी (अपीलार्थी) पिटाई की गई थी और वह शीघ्र ही सो गया था ।

20. साक्ष्य, जिसमें चिकित्सा साक्ष्य भी है, स्पष्ट है और दोनों न्यायालयों द्वारा ठीक ही मूल्यांकन किया गया है । इससे अप्रतिरोध्य

रूप से केवल यह निष्कर्ष निकलता है कि यह आत्महत्या का मामला नहीं था अपितु असंदिग्ध रूप से मानव वध का मामला था । मृत्यु गला घोंटकर कारित की गई थी । अपीलार्थी और उसकी पत्नी एक अलग शयन कक्ष में रहते थे । नाखूनों की कतरन का हवाला दिया गया है, जिनमें रक्त लगा था । इस बात को स्पष्ट करने के प्रयास को विचारण न्यायालय द्वारा ठीक ही निरस्त किया गया था ।

21. अपीलार्थी की ओर से यह पक्षकथन है कि अपीलार्थी को क्षतियां पहुंची थीं । यह उल्लेखनीय है कि जब गला घोंटा जाता है तो जब तक विपदग्रस्त सोया न हो या बेहोश न हो, वह प्रतिरोध करेगा । आक्रामक को क्षतियां पहुंचना असामान्य बात नहीं है । इस मामले में हमने मृतका की गर्दन के अतिरिक्त शरीर के अन्य अंगों पर भी क्षतियां होना पाया है । वे आक्रामक द्वारा हिंसा के कृत्य को इंगित करती हैं । इस मामले में हमें इस बात का निर्णय करने तक के लिए नहीं कहा गया है कि वहां कोई अन्य व्यक्ति था, जो आक्रामक हो सकता था । वह केवल और केवल अपीलार्थी ही है, जिसे उन कृत्यों के लिए दोषी ठहराया जा सकता है, जिनके परिणामस्वरूप उसकी पत्नी की मृत्यु हुई थी ।

22. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल, श्री रंजीत बी. मराड़ द्वारा मामले को धारा 304 भाग 1 की व्याप्ति के भीतर लाने के लिए पुरजोर प्रयास किया गया । उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि यह मानव वध है और अपीलार्थी का अपनी पत्नी की मृत्यु कारित करने का भी आशय था, फिर भी यह मामला धारा 304 भाग 1 के अधीन लाया जा सकता है क्योंकि विधान-मंडल ने अभिव्यक्त रूप से घोषित किया है कि चाहे कोई मानव वध हो, यह बात अपराध को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन लाने के लिए अनम्य नियम नहीं है अपितु मृत्यु कारित करने का आशय मौजूद होने के बावजूद वह अपराध हत्या की कोटि में न आने वाला आपराधिक मानव वध हो सकता है ।

23. इस संबंध में, यह उल्लेखनीय है कि झगड़ा होने के बारे में अभियोजन का पक्षकथन अपीलार्थी की माता द्वारा तारीख 11 अक्तूबर, 1998 को झगड़ा खड़ा करने और मृतका द्वारा बाध्य होकर घर से जाने और बाहर अपने पति की तलाश करने के बारे में है । अपीलार्थी द्वारा अपने मित्रों के सामने अपनी पत्नी के साथ किए गए दुर्व्यवहार के बारे

में भी उल्लेख है और उसके पश्चात् रात्रि में अपीलार्थी द्वारा उसका गला घोंटने की घटना घटी थी । हमारी समझ में नहीं आता कि भारतीय दंड संहिता की धारा 300 का अपवाद 1 कैसे लागू होता है, जिसके बारे में अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा भी दलील दी गई है । अपवाद 1 लागू होने के लिए गंभीर और अचानक प्रकोपन के फलस्वरूप अभियुक्त द्वारा नियंत्रण की शक्ति को खो देना अपेक्षित है । मृतका द्वारा अवश्य ही गंभीर और अचानक प्रकोपन दिया जाना चाहिए । निस्संदेह, यदि अचानक प्रकोपन के फलस्वरूप किसी अन्य व्यक्ति की गलती या दुर्घटनावश मृत्यु कारित की जाती है, तो अपवाद 1 लागू हो सकता है । हमारे समक्ष साक्ष्य में कोई प्रकोपन देने की बात को सिद्ध करने के लिए तनिक भी साक्ष्य नहीं लाया गया है, गंभीर और अचानक प्रकोपन की बात तो दूर । समान रूप से, निस्संदेह प्रतिप्रेषण के पश्चात् भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन लिखित कथन में ऐसा कोई मामला गठित नहीं किया गया है ।

24. हमारे मत में, इस मामले के तथ्यों में अपवाद 4 की भी अप्रयोज्यता को लेकर कोई अंतर नहीं है । अपीलार्थी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपने लिखित कथन में प्रस्तुत किए गए वृत्तांत पर विचार करते हुए हमारे समक्ष यह निष्कर्ष निकालने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि अचानक झगड़ा हुआ था, जिसके कारण अचानक लड़ाई हुई थी और इस कथन में यह भी वर्णित है कि वह शीघ्र ही सो गया था । उस समय तक कोई अचानक लड़ाई या अचानक झगड़ा होने के बारे में कोई सुगबुगाहट तक नहीं है । यह मूल्यांकन किया जाना भी आवश्यक है कि उनके शयन कक्ष में एकांत में क्या घटित हुआ था, उसके बारे में अपीलार्थी को अनन्य जानकारी होने के कारण साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के अधीन इसे अपीलार्थी द्वारा ही सिद्ध किया जाना चाहिए था । यह तथ्य है कि मामले के प्रतिप्रेषण के पश्चात् अपीलार्थी ने धारा 313 के अधीन अपना लिखित कथन फाइल करने के प्रक्रम पर भी संभाव्य रूप से यह मिथ्या मामला गठित करने की कोशिश की थी कि उसकी पत्नी की मृत्यु उसके द्वारा फांसी लगाने के कारण हुई थी ।

25. हम, निस्संदेह भारतीय दंड संहिता की धारा 86 का उल्लेख कर सकते हैं । धारा 86 निम्नलिखित प्रकार से है :–

"86. किसी व्यक्ति द्वारा, जो मत्तता में है, किया गया अपराध, जिसमें विशेष आशय या ज्ञान का होना अपेक्षित है, उन दशाओं में, जहां कि कोई किया गया कार्य अपराध नहीं होता, जब तक कि वह विशिष्ट ज्ञान या आशय से न किया गया हो, जो उसे होता यदि वह मत्तता में न होता जब तक कि वह चीज, जिससे उसे मत्तता हुई थी उसे उसके ज्ञान के बिना या उसकी इच्छा के विरुद्ध न दी गई हो ।"

26. भारतीय दंड संहिता की धारा 86 में यह उपधारणा की गई है कि मत्तता जो इस धारा के अंतिम भाग के अंतर्गत नहीं आती है, के बावजूद अभियुक्त व्यक्ति अपने कृत्य के परिणामों से बच नहीं सकता है । तथापि, मत्तता के बारे में आयाम का उल्लेख किया जा सकता है । धारा 86 ऐसे कृत्य को निर्दिष्ट करते हुए आरंभ होती है, जो अपराध नहीं है, जब तक कि किसी विशिष्ट ज्ञान या आशय के बिना किया जाता है । उसके पश्चात्, विधि निर्माताओं ने मत्तता की दशा में कृत्य करने वाले व्यक्ति के प्रतिनिर्देश किया है । अंततः इस धारा में ऐसे व्यक्ति को वह ज्ञान होना समझा जा सकने का उपबंध किया गया है, जो उसे होता यदि वह मत्तता की दशा में न होता निस्संदेह सिवाय उन दशाओं के जहां मादक पदार्थ या तो उसकी इच्छा के विरुद्ध या उसके ज्ञान के बिना दिया गया था । धारा 86 में कोई कृत्य कारित करने वाले मत्त व्यक्ति पर ऐसा आशय आरोपित नहीं किया गया है, जो ऐसे अपराध की कोटि में आता है, जब ऐसा कृत्य उस व्यक्ति द्वारा कोई विशिष्ट आशय के साथ किया जाता है । **बासदेव** बनाम **पेप्सु राज्य**[1] वाले मामले में इस प्रश्न पर इस न्यायालय का ध्यान आकृष्ट किया गया था । उक्त मामले में अपीलार्थी, एक सेवा-निवृत्त सेना पदधारी, एक विवाह में सम्मिलित होने के लिए गया था । अपीलार्थी ने अत्यधिक शराब पी हुई थी । उसने एक लड़के से थोड़ा सरकने के लिए कहा जिससे कि वह आराम से बैठ सके । लड़का टस से मस नहीं हुआ । अपीलार्थी ने पिस्तोल से, जो उसके पास थी, लड़के के पेट में एक गोली मार दी, जो घातक साबित हुई । इस न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया :–

---

[1] ए. आई. आर. 1956 एस. सी. 488.

"4. निस्संदेह यह सत्य है कि इस धारा के प्रथम भाग में आशय या ज्ञान होने का उपबंध है, जबकि पश्चात्वर्ती भाग केवल ज्ञान होने के संबंध में है और इस लोप के कारण इसके निर्वचन में संदेह का कतिपय तत्व संभाव्यत: महसूस किया जा सकता है । यदि स्वेच्छापूर्वक मत्तता में ज्ञान होने की उपधारणा उसी रीति में की जाती है, मानो कोई मत्तता नहीं थी, तो उन मामलों के बारे में क्या कहा जाएगा जहां आपराधिक मन:स्थिति अपेक्षित होती है । क्या हम उसी आधार पर आशय को रखने के लिए स्वतंत्र हैं, और यदि हैं, तो धारा में उसके पश्चात्वर्ती भाग से आशय का लोप क्यों किया गया है ? यह पहली बार नहीं है कि यह प्रश्न विचार के लिए आया हो । इस प्रश्न पर बहुत से विनिश्चयों में विस्तारपूर्वक चर्चा की गई है और परिणाम का सारांश संक्षेप में निम्नलिखित रूप में दिया जा सकता है ।

5. जहां तक ज्ञान का संबंध है, हमें मत्त व्यक्ति पर वही ज्ञान होना आरोपित किया जाना चाहिए मानो वह कतई मत्तता में नहीं था । किंतु जहां तक आशय का संबंध है, हमें इसका निष्कर्ष मत्तता की मात्रा पर ध्यान देते हुए मामले की विद्यमान साधारण परिस्थितियों से निकाला जाना चाहिए । क्या ऐसा व्यक्ति कुछ समय के लिए पूर्णतया विवेकशून्य था ? यदि ऐसा था तो उसका अपेक्षित आशय होने का निष्कर्ष निकालना संभव नहीं होगा । किंतु यदि वह शराब पीकर अत्यधिक नशे में नहीं था और तथ्यों से यह पाया जा सकता हो कि उसे लगभग सब जानकारी थी तो हम इस नियम को लागू कर सकते हैं कि व्यक्ति को उपधारणात्मक रूप से अपने कृत्य या कृत्यों के स्वाभाविक परिणामों का आभास था ।

6. वास्तव में, हमें हेतु, आशय और ज्ञान के बीच प्रभेद करना है । हेतु एक ऐसी चीज है, जो व्यक्ति को आशय का गठन करने के लिए प्रेरित करती है और ज्ञान उस कृत्य के परिणामों की जानकारी होना है । बहुत से मामलों में आशय और ज्ञान परस्पर मिल जाते हैं और न्यूनाधिक उनका एक जैसा अर्थ होता है तथा आशय की उपधारणा ज्ञान से की जा सकती है । ज्ञान और आशय

के बीच सीमा रेखा निस्संदेह बारीक है किंतु यह बोध करना कठिन नहीं है कि वे अलग-अलग बातों के द्योतक हैं । यहां तक कि इंग्लैंड के कुछ विनिश्चयों में भी तीनों विचारों को एक-दूसरे के स्थान पर प्रयुक्त किया जाता है और इसके कारण कतिपय भ्रम उत्पन्न होता है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

27. इस मामले में इस बारे में कोई साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थी ने कैसे शराब पी थी या मत्तता किसी तरीके से अपेक्षित आशय गठित करने में अपीलार्थी के रास्ते में बाधा बनी थी । जब वह अभिकथित रूप से शराब पीते हुए पाया गया था और जब अपराध किया गया था, उस समय के बीच में भी अंतराल है । इसके अलावा, उसके अनुसार उसने धारा 313 के अधीन अपने कथन में यह कहा है कि वह शीघ्र ही सो गया था और जब वह उठा तो उसने अपनी पत्नी को फांसी पर लटके हुए देखा था । अत: जो सिद्धांत लागू होता है, वह यह है कि यह उपधारणा की जा सकती है कि अपीलार्थी को अपने कृत्य के स्वाभाविक परिणाम का आभास था ।

28. जहां तक इस दलील का संबंध है कि अपीलार्थी की दोषसिद्धि को कम करके धारा 304, भाग 1 के अधीन किया जाना चाहिए, हम इस तर्क से प्रभावित नहीं हैं । किस बात से भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अधीन हत्या का गठन होता है और किस बात से हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध का गठन होता है, एक विवादास्पद मुद्दा और निर्णयज विधि की विषय-वस्तु रहा है । भारतीय दंड संहिता की धारा 300 में यह घोषित किया गया है कि उन मामलों के सिवाय जो विनिर्दिष्ट रूप से छोड़े गए हैं, आपराधिक मानव वध उन स्थितियों में हत्या है जो विनिर्दिष्ट रूप से अधिकथित की गई हैं । इन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 300 में सामान्य रूप से प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ के रूप में निर्दिष्ट किया गया है । यदि विधान-मंडल का आशय यह था कि आपराधिक मानव वध हत्या की कोटि में आएगा यदि यह भारतीय दंड संहिता की धारा 300 में प्रगणित पांच अपवादों में से किसी के अंतर्गत नहीं आता है, तो विधान-मंडल के लिए 'इतने विस्तारित शब्दों में' उल्लेख करने की क्या आवश्यकता थी जो उसने यह

घोषित करते हुए किया कि आपराधिक मानव वध हत्या है यदि कृत्य भारतीय दंड संहिता की धारा 300 में दिए गए 4 खंडों में से किसी के अंतर्गत आता है ? इसीलिए कि कोई कृत्य हत्या के रूप में दंडित किया जाए, यह अवश्य ही आपराधिक मानव वध होना चाहिए जिसे हत्या घोषित किया जाए । हत्या गंभीरतम प्रकार का मानव वध है । इसीलिए दंड समुचित रूप से उच्चतम कोटि का है । हत्या के लिए विशेष आपराधिक मन:स्थिति को सिद्ध करना अपेक्षित है जबकि मानव वध के सभी मामले हत्या की कोटि में नहीं आ सकते हैं । **आंध्र प्रदेश राज्य** बनाम **रायवरप् पुन्नय्या और एक अन्य**[1] वाले मामले के निर्णय में अन्य बातों के साथ-साथ यह अभिनिर्धारित किया गया था :–

> "21. उपरोक्त संक्षिप्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि जब कभी किसी न्यायालय को इस प्रश्न पर विचार करना होता है कि क्या कोई अपराध मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए 'हत्या' है या 'हत्या की कोटि में न आने वाला आपराधिक मानव वध' तो उसके लिए इस समस्या पर तीन प्रक्रमों पर विचार करना सुविधाजनक होगा । प्रथम प्रक्रम पर विचारित किए जाने वाला प्रश्न यह होगा कि क्या अभियुक्त ने कोई ऐसा कार्य किया है जिसके द्वारा उसने किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु कारित कर दी है । अभियुक्त के कृत्य और मृत्यु के बीच ऐसा आकस्मिक संबंध का सबूत इस बात पर विचार करने के लिए द्वितीय प्रक्रम की ओर ले जाता है कि क्या अभियुक्त का वह कार्य धारा 299 में यथा परिभाषित 'आपराधिक मानव वध' की कोटि में आता है । यदि इस प्रश्न का उत्तर प्रथमदृष्ट्या सकारात्मक पाया जाता है तो दंड संहिता की धारा 300 के प्रवर्तन पर विचार करने का प्रक्रम आ जाता है । इस प्रक्रम पर न्यायालय को इस बात का अवधारण करना चाहिए कि क्या अभियोजन पक्ष द्वारा साबित तथ्य मामले को धारा 300 में अंतर्विष्ट 'हत्या' की परिभाषा के चार खंडों में से किसी एक की व्याप्ति के अंतर्गत ले आते हैं । यदि इस प्रश्न का उत्तर नकारात्मक हो तो वह अपराध 'हत्या की कोटि में न आने वाला आपराधिक मानव वध' होगा जो कि इस बात पर निर्भर करते हुए कि क्या क्रमश: धारा 299 का खंड (2) या खंड (3) लागू होता

---

[1] [1977] 3 उम. नि. प. 1104 = (1976) 4 एस. सी. सी. 382.

है, धारा 304 के प्रथम या द्वितीय भाग के अधीन दण्डनीय होगा । यदि यह प्रश्न सकारात्मक पाया जाता है किंतु मामला धारा 300 में प्रगणित अपवादों में किसी के अधीन आ जाता है तो अपराध तब भी 'हत्या की कोटि में न आने वाला मानव वध' होगा जो कि दंड संहिता की धारा 304 के प्रथम भाग के अधीन दंडनीय होगा ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

29. जहां तक इस मामले का संबंध है, इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि जिस कृत्य के कारण मृत्यु हुई थी वह अपीलार्थी द्वारा कारित किया गया था । हम सुरक्षित रूप से इस आधार पर भी अग्रसर हो सकते हैं कि यह कृत्य आपराधिक मानव वध की कोटि में आता है । इस मामले में विद्यमान परिस्थितियों और विशिष्ट रूप से मृतका को पहुंची क्षतियों पर विचार करने पर यह पूरी तरह स्पष्ट है कि यह कृत्य भारतीय दंड संहिता की धारा 300 की परिधि के अंतर्गत आएगा । यदि किसी कृत्य के परिणामस्वरूप मानव वध होता है जो हत्या की कोटि में नहीं आता, केवल और केवल तब यथास्थिति, धारा 304 भाग 1 या भाग 2 लागू होने का प्रश्न उद्भूत होता है । अपीलार्थी धारा 304 भाग 1 का उल्लेख करके हत्या के संघटकों को लागू करने के लिए अपने कृत्य के परिणाम से स्वयं को नहीं बचा सकता है, जिसमें 'मृत्यु कारित करने के आशय से किया गया कार्य' अभिव्यक्ति अंतर्विष्ट है । इन दोनों के निहितार्थ में व्यापक अंतर है । भारतीय दंड संहिता की धारा 304 केवल उस मामले में लागू होगी जहां आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है । यदि आपराधिक मानव वध की कोटि में आने वाला कृत्य जिसे हत्या के अपराध के अधीन लाने के लिए चार मानदंडों में किसी का समाधान कर देता है, जो कि परस्पर अनन्य हैं, तब भारतीय दंड संहिता की धारा 304 लागू करने के लिए कोई गुंजाइश नहीं हो सकती है । दूसरी ओर, यदि कृत्य ऐसा मानव वध है जो धारा 300 में वर्णित पांच आपवादिक परिस्थितियों में से किसी के अंतर्गत आता है तब यह हत्या की कोटि में न आने वाला आपराधिक मानव वध होगा । ऐसे मामलों में जहां अभियुक्त यह सिद्ध करने में समर्थ हो जाता है, वह धारा 300 के अधीन

अपवादों में से किसी अपवाद के फायदे का हकदार है तब उसके मामले पर भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के भाग 1 या भाग 2 के अधीन इस बात पर निर्भर करते हुए विचार किया जा सकता है कि क्या वह कृत्य जिससे मानव वध कारित हुआ था वह मृत्यु कारित करने के आशय से या इस ज्ञान से किया गया था कि इससे मृत्यु कारित हो जाना संभाव्य है । इसके अतिरिक्त, आपराधिक मानव वध के ऐसे मामले जिनमें धारा 300 के अधीन चार स्थितियों में से कोई लागू नहीं होती है, फिर भी भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के अधीन विचार किए जाने के लिए आपराधिक मानव वध का मामला होगा । तथापि, यदि मामला धारा 300 के चार भागों में से किसी के अंतर्गत आता है, तो धारा 304 को लागू करने का कोई कारण नहीं होगा । यदि वह कृत्य जिससे मृत्यु कारित हुई है और जो आपराधिक मानव वध है जिसे मृत्यु कारित करने के आशय से किया गया है, तब वह कृत्य हत्या होगा । तथापि, यह उस कृत्य के अध्यधीन होगा जो पांच अपवादों में से कोई लागू न होने वाली परिस्थितियों में कारित किया गया है । अपीलार्थी की दलील यह है कि यह हत्या की कोटि में न आने वाला मानव वध है और धारा 304 भाग 1 में 'मृत्यु कारित करने के आशय से किया गया' शब्दों का लिया गया अवलंब पूर्णतया सारहीन है ।

30. इस मामले के तथ्यों के अनुसार अपीलार्थी के कृत्य से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि उसने अपनी पत्नी का गला घोंटा था । धारा 300 में का कोई अपवाद लागू नहीं होता है । उसका कृत्य भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अर्थांतर्गत हत्या की कोटि में आता है । उपरोक्त चर्चा का निष्कर्ष यह है कि हमें आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है । यह अपील खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

जस.